'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक ५७ | वाराणसी, गुरुवार, १४ मई, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

स्वागत-समारोह में

चण्डीगढ़ (पंजाब) १-५-'५९

नये नगरों के निर्माण में जीवन-शक्ति का संचार हो

हमारा देश बहुत पुराना है। इसके पीछे हजारों वर्षों का इतिहास है। कितने ही राज्य आये और गये, समाज-रचनाएँ बनीं और बिगड़ीं, पर वे सभी हमारे देश को पराभूत नहीं कर सकीं। बाहर से अनेकों जमातें इस देश में आयीं, जिससे कुछ कशमकश चली। लेकिन फिर एक मिली-जुली सभ्यता बन गयी, जिसमें सबका मेल-मिलाप करने की क्षमता थी। भारत की यह एक अपनी खास विशेषता है कि यहाँ सभी विचारों का समन्वय किया जाता है। जिन विचारों में एकांगी-पन होता है, उन्हे छोड़ दिया जाता है और जिनमें गुण होता है, वह ग्रहण कर लिया जाता है। इससे हमें हर विचार के गुण का लाभ मिलता जाता है और हम क्रमशः परिपूर्ण विचार बनाते हुए आगे बढ़ते हैं। हम किसी भी विचार को अपूर्ण नहीं मानते। सभी को पूर्ण मानते हैं। अपूर्णों के योग से पूर्ण बनाना हमें इष्ट नहीं है। पूर्णों के संयोग से परिपूर्ण बनाना—यही हमारी दृष्टि है।

विचार-स्वातन्त्र्य का मूल्य

हिन्दुस्तान में एक बहुत बड़ी बात है : विचारों की आजादी। संस्कृत साहित्य में हम जितनी विचारों की आजादी देखते हैं, उतनी कहीं अन्यत्र नहीं दिखाई पड़ती। यहाँ पर एक ही धर्म के छह-छह दर्शन हैं, जो एक-दूसरे के साथ मुखालिफ करते हुए एक ही धर्म में रह सकते हैं। यहाँ पर ग्रन्थ भी पचासों हैं। कोई एक को मंजूर करता है तो कोई दूसरे को। हरएक अपने-अपने लिए अलग-अलग ग्रन्थों को प्रमाण मानता है और मान सकता है। कोई रामायण पढ़ेगा तो भागवत पढ़ने से इन्कार करेगा और कोई भागवत पढ़ेगा तो रामायण पढ़ना स्वीकार नहीं करेगा। किसी को वेद मान्य हैं तो किसी को आगम। कोई कृष्ण का भक्त है और कोई राम का। कोई दोनों को नहीं मानता। यहाँ तक कि कुछ दार्शनिक भगवान को मानने से भी इन्कार कर देते हैं। ईश्वर है या नहीं, इस विषय में कोई आग्रह नहीं है। कुछ दार्शनिक 'है' कहते हैं तो कुछ 'नहीं'। कुछ ऐसे अजीब हैं, जो कहते हैं कि 'दोनों है' यानी ईश्वर 'है' भी और 'नहीं' भी। एक निगाह से देखा जाय तो ईश्वर है और दूसरी निगाह से देखा जाय तो ईश्वर नहीं है। कपिल मुनि 'ईश्वर नहीं है' कहते हैं तो पतंजलि कहते हैं 'ईश्वर है'। कोई कर्म नहीं मानते हैं। बादरायण कर्म मानते हैं। फिर भी हैं सबके सब हिन्दूधर्म में ही।

आत्मज्ञान और विज्ञान में कोई विरोध नहीं

हिन्दूधर्म में आत्मज्ञान के साथ विज्ञान का कोई विरोध नहीं है। यद्यपि यह सच है कि पश्चिमवालों की अपेक्षा आज हम विज्ञान में पिछड़ गये हैं, लेकिन यह भी उतना ही सच है कि पश्चिम की तरह हमने आत्मज्ञान और विज्ञान में टक्कर नहीं होने दी। यूरोप में ४०० वर्षों पूर्व जब विज्ञान की शुरुआत हुई, तब वहाँ धर्मवालों की तरफ से वैज्ञानिकों को बहुत ही तकलीफ दी गयी। उन्हें यह भी कहा गया कि आपके विचार बाइबलवालों के खिलाफ हैं। लेकिन भारत में वैसा कुछ नहीं हुआ। यहाँ धर्मग्रंथों के आधार पर धर्म में सबकी श्रद्धा को स्थिर करनेवालों के शिरोमणि शंकराचार्य ने कहा कि 'अग्नि ठंडी है'—ऐसा कहनेवाली हजार श्रुतियाँ निकलें, तब भी वे सही नहीं हो सकतीं, क्योंकि उसका प्रत्यक्ष विरोध है। इसलिए विज्ञान, जो कि प्रत्यक्ष में काम करता है—उसका धर्म के साथ किसी प्रकार विरोध उत्पन्न नहीं हुआ।

विज्ञान और धर्म के विषय अलग-अलग हैं। आँख और कान के विषय अलग-अलग होने से उनमें कोई विरोध नहीं हो सकता। कान कहे कि अमुक ध्वनि बहुत मधुर है और फिर इसी पर अगर आँख की सम्मति पूछी जाय तो वह कहेगी कि यह विषय मेरा नहीं है। उसी प्रसार आँख कहे कि अमुक रूप सुन्दर है और फिर उसके बारे में भी कान से पूछा जाय तो वह कहेगा कि यह विषय मेरा नहीं है। उसी प्रकार विज्ञान और धर्म के विषय अलग-अलग हैं। विज्ञान का विषय है बाह्यसृष्टि और वेदान्त का विषय है आत्मज्ञान। बाह्यसृष्टि में इन्द्रियाँ प्रमाण हैं और आत्मज्ञान में दृश्य को देखनेवाला द्रष्टा प्रमाण है, इन्द्रियाँ प्रमाण नहीं हैं।

वैज्ञानिक का प्रयोग दूसरी हजार चीजों पर होगा, लेकिन अपने आप पर हरगिज नहीं होगा। वह अपने आप की सत्ता मानकर ही चलता है। यह नियम है कि सबका विश्लेषण करनेवाला पुरुष अपने आपका विश्लेषण नहीं करता। वह यह मानकर ही चलता है कि उसकी हस्ती है ही। इस प्रकार देखने से ज्ञात होता है कि वेदांत की दृष्टि अंदर है तो विज्ञान की बाहर। जैसा

कि शंकराचार्य ने कहा है इन दोनों का विरोध हो ही नहीं सकता।

भारतीय सभ्यता का मुख्य लक्षण समन्वय है

जिस प्रकार परस्परविरोधी सप्त स्वरों से सुन्दर संगीत बनता है, उसी तरह जो विचार देखने में परस्परविरोधी मालूम पड़ते हैं, वे वास्तव में वैसे नहीं होते। पेड़ की लकड़ी अत्यन्त सख्त होती है, किन्तु उसके फूल अत्यन्त कोमल होते हैं। फूलों से फल निकलते हैं, वे होते हैं कच्चे, किन्तु जब वे पकते हैं, मधुर बन जाते हैं। इसी तरह आम के अन्दर की गुठली कैसी होती है? पत्थर जैसी कठोर! देखने में ये सारी बातें परस्पर-विरोधी मालूम पड़ती हैं, मगर वास्तव में वे वैसी नहीं हैं। उपर्युक्त जितने भी गुठली, फूल, फल आदि हिस्से हैं, वे सभी एकमात्र वृक्ष के ही प्रकार हैं—हिस्से हैं। मोटे तौर पर देखा जाय तो पानी और आग का परस्परविरोधित्व स्पष्ट ही है, लेकिन पाचनक्रिया कैसे होती है? दोनों के सहकार्य से। जब तक पानी और आग मिलकर काम न करें, तब तक कोई भी चीज हरगिज पकाई नहीं जा सकती। चावल बनाने के लिए आग, पानी, चावल और बर्तन—ये चार चीजें अपेक्षित हैं। इसका भी क्रम है। पहले आग सुलगाना, फिर उस पर बर्तन रखना, बर्तन में पानी डालना और फिर उसमें चावल डालना। इस तरह चावल बनता है। अगर ये ही चारों बातें उलटा-सुलटा कर की जायँ अर्थात् आग सुलगाकर उसमें चावल डाल दिया जाय, उस पर पानी डाल कर फिर ऊपर बर्तन रखा जाय तो चावल नहीं बनेंगे। इसीलिए तरकीब की आवश्यकता है। अगर तरकीब से काम न लिया जाय तो वे ही चारों बातें परस्परविरोधी जान पड़ने लग जाती हैं। तरकीब से काम लेने पर चीजों का मेल मिलता है, नहीं तो मुखालफत पैदा होती है। जिसमें भेद दिखाई दे, उसका मेल बिठा देना—इसी का नाम है समन्वय, जो कि भारतीय सभ्यता का मुख्य लक्षण है।

साम्राज्यों के उत्थान-पतन के द्रष्टा

अब यहाँ पर एक नयी नगरी बसायी जा रही है—चंडीगढ़ (पंजाब की राजधानी)। एक-एक राज्य के बाद कई-कई नगरियाँ बसायी गयीं और बाद में उजड़ गयीं। वर्धा नदी के किनारे एक छोटा सा गाँव है—कुन्डिनपुर। अमरावती शहर वहाँ से पचास मील दूर है। लेकिन इतिहास में तो हम पाते हैं कि एक जमाने में कुन्डिनपुर बड़ा भारी नगर था। इसके विषय में कहा जाता था—'महाराष्ट्रमुखमंडनं कुंडिनं नाम' अर्थात् महाराष्ट्र के मुख की शोभा बढ़ानेवाला कुन्डिनपुर। उस समय वह शहर आज की अमरावती तक अर्थात् ५८ मील लंबा था। श्रीकृष्ण की पत्नि रुक्मिणी यहीं की रहनेवाली थी। इतना बड़ा शहर आज एक गाँव बना हुआ है। यही हाल विजयनगर का है। पुराने ग्रंथों में इसका वर्णन आता है कि यहाँ विपुल संपत्ति थी। ऐसा विशाल तथा समृद्ध-सम्पन्न नगर आज एक खंडहर बना हुआ है। कुछ साल पहले भारत के पश्चिमी किनारे पर एक छोटी सी चीज थी—बिलकुल ना चीज, जिसकी कोई हस्ती नहीं थी। वही आज बंबई का रूप धारण कर कई लाख लोगों के रहने की जगह बन गयी है। भारत के ३०० जिलों में से २०० जिलों के लोग बंबई में रहते हैं। इस तरह अनेक राज्यों की उथल-पुथल हुई, देहली तो एक कबरिस्तान मालूम पड़ता है। जमुना के पानी ने पाँच हजार वर्षों के इतिहास में कितने ही साम्राज्यों का उदय-अस्त देखा है।

एक ओर निर्माण, दूसरी ओर ध्वंस

इस नये शहर को नयी आकांक्षा, नये विचार और नये ढंगों से बनाना जरूरी है। पहले घरों में गवाक्ष याने खिड़कियाँ बनाने का रिवाज था। लेकिन गवाक्ष का अर्थ है, गाय की आँख। इसका मतलब यह हुआ कि पहले गाय के आँख की तरह छोटी खिड़कियाँ बनायी जाती थीं। बहुत से नगर अनार्यों के द्वारा दूसरों को लूटने, उनका शोषण करने तथा भोगवृत्ति के लिए बनाये गये। इसलिए फिर इंद्र भगवान ने कहा कि मैं नगरों का विदारण करूँगा। 'शतं पुरः अदारीत्'—अर्थात् उसने सौ ऐसे नगरोंको तोड़ा। इसीलिए इन्द्र का नाम है—पुरन्दरः—नगरों को तोड़नेवाला। इन दिनों ऊपर से गिरनेवाला बम शहरों को तोड़ेगा, याने इन्द्र ने बम का अवतार ले लिया है। अब इन्द्र को तकलीफ नहीं देनी पड़ती। मामूली बम से ही काम चल जाता है। कहा जाता है कि लंदन की लायब्रेरी में दुनिया की हर भाषा की हर अच्छी पुस्तकों की प्रति है। इस प्रकार एक ओर पाश्चात्य लोग ज्ञान का इतना संग्रह करते हैं और दूसरी ओर अज्ञान से बिना किसी की परवाह किये बम डालते हैं। केवल अपने ही हाथों से अपने नगरों पर बम नहीं डालते—इतनी गनीमत है। जर्मन लंदन पर तो अंग्रेज बर्लिन पर बमबाजी करते हैं। गीता के 'परस्परं भावयन्तः' के अनुसार वे एक-दूसरे को नीचा दिखाने की चेष्टा करते हैं। जर्मन बड़े उद्यमी हैं। अब फिर से उन्होंने बर्लिन को खड़ा किया है। बाहर शहर तोड़े जाते हैं तो उन्हें उद्यम करने तथा नया शहर बनाने का मौका मिलता है। इस तरह बहुत बड़ा कर्मयोग तथा कर्मभोग चलता है। एक तरफ वे नये शहर बनाते हैं और दूसरी तरफ अत्यन्त विध्वंसक वृत्ति प्रकट करते हैं।

'अग्रतश्चतुरो वेदाः पृष्ठतः सशरं धनुः'

पश्चिमवालों ने खूब परिश्रम करके ज्ञान का भंडार बढ़ाया है। पर अगर आप ऐसे शिक्षक को देखें, जिसके एक हाथ में पुस्तक और दूसरे में पिस्तौल—तो क्या कहेंगे? अगर ज्ञान पर आपका विश्वास है तो ज्ञान से ही परिवर्तन क्यों नहीं कर लेते? शंकराचार्य से पूछा गया कि अगर कोई आप से सवाल पूछे तो आप क्या करेंगे? उन्होंने कहा—जबाब दूंगा। दुबारा पूछे तो क्या करेंगे? दुबारा जबाब दूंगा। बार-बार पूछे तो बार-बार जबाब दूंगा। 'ज्ञापकं शास्त्रम् न कारकम्।' हमारा एकमात्र शस्त्र है—ज्ञान। हम ज्ञान ही देते रहेंगे और ज्ञान ही समझाते रहेंगे।

आजकल कहा जाता है कि एक बार समझाने से न समझे तो तमाचा मारेंगे। मैं कहता हूँ अगर तमाचे से ही काम होता है तो पहले ही क्यों नहीं मारते? समझाते क्यों हो? दुनिया में यही चला आ रहा है। पहले राम कृष्ण आदि देवताओं की भक्ति की जाती है, लेकिन आखिरी देवता चंडी ही है। आखिरी दारोमदार हिंसा पर है। यह ठीक है कि परिवार को चलाने के लिए प्रेम चाहिए, परंतु वह भी स्वाद के तौर पर। बचानेवाली शक्ति प्रेम नहीं, चंडी है—ऐसा लोग मानते हैं। मौके पर अल्ला मियाँ नहीं बचायेगा, बचायेगी तलवार।

पैगंबर ने कहा है—'लाइकराह फिद्दीन' धर्म के बारे में जबर्दस्ती नहीं हो सकती। सत्य से असत्य प्रकट हो जायगा। एक ओर तो ऐसा कहा गया और दूसरी ओर इस्लाम का प्रचार करने के लिए तलवार उपयोग में लायी गयी। 'अग्रतः चतुरो वेदाः पृष्ठतः सशरं धनुः।' आगे-आगे वेद और पीछे धनुष। वेद

को कबूल करते हो तो ठीक, नहीं तो बराबर तीर चलाया जायगा। 'शापादपि शरादपि' शाप से और शर से भी काम होगा। इससे यह ज्ञात होता है कि आखिरी दारमदार तमाचे पर और इस युग में आणविक अस्त्रों पर रहता है।

नयी नगरी में नया दर्शन हो

हमारे देश में अनेक देश और संस्कृतियाँ बनीं, बिगड़ीं, अब जरूरत है उनके मूल में आये हुए अनुभवों की तरफ ध्यान देने की। नगर ऐसा नहीं बनाना चाहिए कि नजर लग जाय। ट्रेन में मुसाफिर खाना खाने वक्त एक दूसरे की तरफ पीठ कर बैठते हैं, ताकि नजर न लग जाय। माँ के सामने बच्चा खाता है तो क्या माँ की नजर लगेगी? बच्चे के सामने माँ खाती है तो क्या बच्चे की नजर लगेगी? माँ बच्चे को खिला चुकने के बाद ही खाती है। इसलिए बच्चा उसके भोजन के समय प्यार से उसके पास बैठता है। लेकिन हमें घर में भी दरवाजा बन्द करके खाना पड़ता है। पड़ोसी के घर में शोक—कुहराम मचा हुआ है, इसलिए हमें छिपाकर भोग करना पड़ता है, ताकि किसी की नजर न लगे। नगरी को आस-पास के लोगों की नजर लगी तो वह टूटे बिना नहीं रहेगी। यह सोचकर नगरी ऐसी बनाइये, जिससे दूसरों की नजर न लगे। नागरिकों का जीवन ऐसा होना चाहिए, उनका व्यवहार ऐसा होना चाहिए कि आसपास के लोगों को लगे कि यह नगरी हमारे लिये मातृस्थान है। यहाँ के लोग हमें मदद करते हैं।

राज्य चलाने का नमूना

रायगढ़ शिवाजी की राजधानी थी। बत्तीस साल पहले मैं वहाँ पहुँचा। मैंने देखा कि वहाँ एक भी मकान मौजूद नहीं था। सारे कच्चे मकान बनाये गये थे, जो गिर गये थे। राज्य गया, इसलिए मकान टिकने की क्या जरूरत थी? लेकिन शिवाजी ने प्रतापगढ़ पर देवी का ऐसा सुन्दर मजबूत मंदिर बनाया था कि कि वह उस वक्त भी मौजूद था। क्या शिवाजी रायगढ़ पर मकान नहीं बना सकता था? गुरु समर्थ रामदास ने उन्हें उपदेश दिया था कि 'देवा चे वैभव वाढ़वावे', भगवान का वैभव बढ़ाना चाहिए, अपना नहीं। यही कारण था कि उन्होंने अपने लिए घास-फूस की झोपड़ियाँ बनाकर भगवान का मंदिर मजबूत बनाया। उसी के अनुयायी १०० वर्ष बाद पानीपत की लड़ाई में अपने बाल-बच्चों तथा परिवार आदि के साथ लड़ने गये और हारकर मार खाकर वापस लौटे। भोग-विलास में पड़े, इसलिए नष्ट हो गये।

शिवाजी ने अपना नहीं, भगवान का वैभव बढ़ाया, इसलिए महाराष्ट्र के लोग उसके कृतज्ञ हैं और उसके स्मरण से पवित्र हो जाते हैं। एक राजा होते हुए भी वह वैरागी था और आस-पास की गरीब जनता से उसका जीवन तन्मय हो गया था।

राजा जनक को 'जनक' क्यों कहा जाता था? 'जनको जनकः इति वै जनाः धावन्तीति।' हमारा पिता आया पिता—ऐसा कहते हुए लोग उसके पास दौड़े जाते थे। जनता महसूस करती थी कि वह हमारा पिता है। हम अपना दुखड़ा रोयेंगे तो वह जरूर हमारी चिंता करेगा। जनक के समान राजा चाहिए। लक्ष्मी पास में रहने पर भी अनासक्त।

लक्ष्मी के स्वयंवर में सारे देवता आये, लेकिन उसने घोषित किया कि जो मुझे नहीं चाहेगा, उसी के गले में मैं माला डालूँगी। सारे के सारे लोग चाह लेकर आये थे, इसलिए बेवकूफ साबित हुए और भाग गये। फिर लक्ष्मी अपना वर ढूँढते-ढूँढते क्षीरसागर पहुँची। भगवान विष्णु के पास बैठकर उनकी सेवा करने लगी। भगवान को उसकी परवाह न थी।

भरत अयोध्या में रहता हुआ भी राम का ध्यान कर वैराग्य से राज्य चलाता था। इसलिए राम के वापस आने पर जब दोनों मिले तो कवि लिखता है दोनों के शरीर तप से इतने क्षीण हो गये थे कि यह कहना कठिन था कि कौन राम है और कौन भरत अर्थात् कौन बन में गया था और कौन अयोध्या में था। आखिर राम था बड़ा और भरत छोटा, इसलिए कुछ पहचान हो जाती थी। यह है हिन्दुस्तान का राज्य चलाने का आदर्श नमूना।

हम ऐसा नगर बनायें, जो सर्वांगसुन्दर हो, जिसको किसी की नजर न लगे। उल्टे सबको यह लगे कि यहाँ हमारा दुःख मिटेगा। मैं आशा करता हूँ कि चंडीगढ ऐसा नगर बनेगा।

मत माँगो—फिर भी मिलेगा

मैं भूदान, ग्रामदान के लिए देशभर में घूम रहा हूँ। हिन्दुस्तान की सभ्यता के लिए यह एक मामूली चीज है। पंजाब में एक सुन्दर शब्द है—'साझीवालता'। इसी के अनुसार आप अपना जीवन बनाइये। 'घड़िये शब्द रूपी टकसाल' शब्द हमारा रक्षण करता है, जब हम इस पर अमल करते हैं। ईसामसीह ने कहा था—माँगो और मिलेगा। मैंने इसी शब्द का प्रयोग किया। लोग मुझे देने लगे। छह लाख लोगों ने अब तक दान दिया है। मेरी न कोई सत्ता है, न संस्था। न कोई मेरे अनुयायी ही हैं। मैं किसी को डरा धमका नहीं सकता और न अनुशासन की कारवाही ही कर सकता हूँ। कांग्रेसवाले कह सकते हैं कि नागपुर-प्रस्ताव का विरोध करोगे तो कांग्रेस को छोड़कर जाना होगा, लेकिन बाबा के पास ऐसी कोई शक्ति नहीं है। न वह किसी शक्ति को चाहता है और न उसे किसी दंडशक्ति पर विश्वास ही है। बाबा ने समझ लिया है—माँगो और मिलेगा।

यहाँ के लोगों ने मुझे एक कहावत सुनाई—'बिन माँगे मोती मिले, माँगे मिले न भीख' जो धार्मिक दृष्टि से काम करता है, उसे माँगने पर मिलता है, परन्तु न माँगने पर तो जवाहर, माणिक, मोती मिलते हैं। पंजाब में मैं इसी युक्ति का आश्रय लेनेवाला हूँ। यहाँ मैं माँगनेवाला नहीं हूँ, फिर भी मुझे अवश्य मिलनेवाला है। मुझे विश्वास है कि वेद, गीता, उपनिषद् आदि ग्रंथों को देनेवाला पंजाब मेरे इस विचार पर अवश्य अमल करेगा।

प्रेम और सत्य से बढ़कर दूसरा धर्म नहीं है। ग्रामदान के कारण श्रमनिष्ठा बढ़ेगी, परोपकार की वृत्ति बढ़ेगी। ग्रामदान में सब लोग मिल जुलकर काम करेंगे, स्वार्थ की भावना छोड़ देंगे। परिणाम-स्वरूप समाज में प्रेम और परमार्थ की भावना आयेगी—यही सब धर्मों का सार है।

◇◇◇

प्रार्थना-प्रवचन

सूरजगढ़ (राज०) ३१-३-'५९

रक्षण-शक्ति के बिना सर्वोदय-विचार कामयाब नहीं होगा

आज यहाँ सारे प्रान्त के लोग आये हैं। उन्होंने यह इच्छा प्रकट की है कि हम यहाँ फिर से आयें। लोगों की इच्छा है और हमारी भी ऐसी ही अभिलाषा है। हम चाहते हैं कि कम-से-कम हिन्दुस्तान के दस-बारह चक्कर लगायें। यह बात कोई कठिन नहीं है। अगर कार्यकर्ता पूरी तरह से तैयार रहें तो भारत के इस सिरे से उस सिरे तक हम आठ महीने में जा सकते हैं। अभी हम जो काम कर रहे हैं, उसका एक पहलू खतम हो रहा है। अब नये-नये पहलू आ रहे हैं। इसलिए हम अपनी यात्रा का सिलसिला भी नये ही ढंग से रखना चाहते हैं।

एक भाई ने कहा कि आप भूदान, संपत्तिदान, जीवन-दान, फिर ग्राम-स्वराज्य, शांतिसेना, सर्वोदय-पात्र इस प्रकार से एक-के-बाद एक नयी-नयी बातें रखते जाते हैं। अब जरा एक दफा 'समाप्तम्' कह दीजिये, ताकि हम विश्वस्त हो जायँ और समझ लें कि अब इस जादूगर की थैली से कुछ निकलनेवाला नहीं है। हमने कहा कि जादूगर हम नहीं, वह तो कोई दूसरा है। उसकी थैली से क्या-क्या निकलेगा, कुछ कह नहीं सकते। कुछ-न-कुछ निकलेगा ही। हम कहना यह चाहते हैं कि हिन्दुस्तान में दस-बारह बार यात्राएँ हो जायँ तो भी ताजगी रहेगी, क्योंकि जादूगर अपनी थैली से कुछ-न-कुछ नयी चीजें निकालता ही रहेगा।

एक उदाहरण

राजस्थान में बड़े-बड़े रथी-महारथी, अति-महारथी, बड़े-बड़े विद्वान, सेठ-साहूकार तथा बड़े-बड़े अनुभव प्राप्त लोग हैं। हमें यहाँ काम करने के लिए उन सबकी सहानुभूति प्राप्त करनी होगी।

इस झुंझनू जिले में एक छोटा सा लड़का भवानी* काम कर रहा है। यह यहाँ का निवेदक है। इस के साथ मेरा वर्षों से परिचय है। यह आश्रम में रहा है। जब सर्वप्रथम यह आश्रम में आया, तब बिल्कुल शुष्क लकड़ी जैसा था। इसके शरीर में खून नहीं है, ऐसा ही भास होता था। परन्तु खूब काम करता था। दस-दस घंटे, कभी-कभी बारह-बारह घंटे काम करता था। कम-से-कम खाता था। कभी-कभी जीभ पर अंकुश रखने के लिए खाने में भी व्रत रखता था। यह छोड़ो, वह छोड़ो-इस तरह प्रयत्न करता था। कभी-कभी मुझे पूछता था कि अमुक चीज खाने की वासना हुई है, अतः क्या करना चाहिए? तब मैं कहता था कि यह छोड़ना, वह छोड़ना—यह बात ही तुम छोड़ दो, तभी जरा ठीक चलेगा। यह मेरी बात समझा, फिर भी उस दिशा में सतत कोशिश करता रहा। वहाँ इसने बहुत काम भी किया। इसके माता-पिता को भी शंका थी कि शायद लड़के की सेहत साथ नहीं देगी। फिर भी जब हम भूदान के लिए निकल पड़े, तब यह हमारे पास मिलने के लिए आया था। उस समय हम काशी में थे। एक-दो रोज इसके साथ बातें हुईं। बाद में यह कहने लगा कि वापस जाकर राजस्थान में अब मैं भूदान का काम करना चाहता हूँ। इसने रेल्वे से वापस जाने की बात की। तब मैंने उसको डाँटा। वे दिन बारिश के थे। मैंने इसे कहा कि तू ट्रेन में यहाँ क्यों आया? यह तुमने गलती की है। अब वापस पैदल-पैदल आओ। तब सब को शंका थी कि ऐसी बारिश में राजस्थान में पहुँचते-पहुँचते यह लड़का जीवित रहेगा भी या नहीं? लेकिन मैंने इसे कह दिया कि सामान ढोना चाहिए, पैदल जाना चाहिए और फौरन जाना चाहिए। उसी समय इसने हमारी बात को मान लिया। जब यह काशी से निकला, तब हम चार-पाँच मील तक इसे पहुँचाने के लिए गये। उस समय भी बारिश हो रही थी। परन्तु यह लड़का हिम्मत के साथ निकला और राजस्थान पहुँचा। तब से आज तक सतत काम में लगा है। मेरा इस पर बहुत प्यार है। यह लड़का ऐसा है कि कभी किसी का नुकसान नहीं करेगा। कभी किसी को ठग नहीं सकेगा। चाहे स्वयं खूब तकलीफ भोगेगा, पर दूसरे को नहीं ठगेगा। यह तो शून्य है। इसके पीछे एक आये, दो आयें, तीन, आयें चार आयें, सात आयें तो भी यह स्वयं शून्य है। मैं आशा करता हूँ कि यहाँ बहुत काम होगा और काम करनेवाले निकलेंगे।

झुंझनू से जो आँकड़े मिले हैं, वे आश्चर्यकारक ही हैं। इस आराम-तलब जिले में २५-३० शान्ति-सैनिक मिले हैं। उनको तालीम दी जायगी। वे भी नवजवान हैं। परमेश्वर की कृपा है कि ऐसे जवान लड़के इस काम में आते हैं। परमेश्वर बच्चों के हाथ से काम कराना चाहता है। इन्हीं के हाथों से रामायण बनेगी। ये छोटे-छोटे लड़के हैं, इनको सबका सहयोग मिलना चाहिए।

शान्ति-स्थापना के लिए हम पहुँचें

राजस्थान में एक ताकत प्रकट होने जा रही है। सात-आठ साल के अंदर-अंदर विकसित, अंकुरित ताकत होने जा रही है। सर्वोदय का काम आया है, तब से लोगों में एक प्रकार का उत्साह आया है। आज ही एक भाई से बात हो रही थी। मैंने कहा कि गाँव की योजना गाँववालों को करनी चाहिए और अपने पाँव पर खड़ा होना चाहिए। हमें हमारी सत्ता गाँव पर लादनी नहीं चाहिए। चीन ने तिब्बत को खा लिया है। चीन और तिब्बत दोनों हमारे पड़ोसी देश हैं। एक पड़ोसी ने दूसरे पड़ोसी को खा लिया, यह देखते रह गये। हम कर भी क्या सकते हैं? हमारी मर्यादा है। लेकिन हमारी आँखों के सामने ऐसी घटना होती है और हम आराम से देखते रहते हैं। इससे कैसे चलेगा? इसलिए कम-से-कम हमारे देश में ऐसी कुछ घटनाएँ होती हैं तो हमें तत्काल वहाँ पहुँचना चाहिए और स्थिति को काबू में करना चाहिए।

आज क्या हो रहा है? कुछ लोग सरकार में जा रहे हैं। रचनात्मक कार्यकर्ता कोने में बैठे हैं। उनकी आवाज बाहर नहीं पहुँचती। भिन्न-भिन्न राजनैतिक पक्षों में झगड़ा चलता है। इस हालत में कोई ऐसा विचार हो, जो सबको खींच सके तो बहुत ही लाभदायी होगा। ऐसा सब को छूनेवाला विचार सर्वोदय-पात्र का है। मुझे इसमें बहुत बड़ी ताकत मालूम होती है। इस काम के जरिये हर घर से हमारा परिचय होता है। यह परिचय भी बहुत बड़ी कीमती चीज है। हर घर से शांति के लिए सम्मति मिल जाती है तो शांति-स्थापना में बहुत बड़ी मदद मिलेगी। मैं यह चाहता हूँ कि हर घर में यह काम हो जाय।

यह काम बहनों को सौंपना है

सर्वोदय-पात्र की स्थापना हर घर में हो, ऐसा एक जिला होना चाहिए। ग्रामदान का आंदोलन छोड़कर कोई नया आन्दोलन,

* श्री भवानी भाई झुंझनू जिले के निवेदक हैं।

नया काम हमने नहीं लिया है। यह तो घर-घर से सम्बन्ध रखने की बात है। हम यह काम बहनों को सौंपना चाहते हैं। यहाँ पचास सर्वोदय-पात्र मिले हैं; यह आरम्भ हो गया है। पर हमें यह सुनने की इच्छा है कि इस गाँव के कुल घरों में सर्वोदय-पात्र रखे गये हैं। हम रोज सुबह एक मन्त्र बोला करते हैं—"पूर्णमदः, पूर्णमिदम्"—कोई भी काम अपूर्ण नहीं करना चाहिए। नानक ने भी कहा है, "नानक पूरा पाया, पूरे के गुण गाओ।" पचास सर्वोदय-पात्र यह अधूरा काम है। इस तरह से यहाँ हवा बन रही है। हम सुनना चाहते हैं कि इस इलाके के सभी गाँव ग्रामदान में मिल गये। वह शिखर की बात है। लेकिन सर्वोदय-पात्र बुनियाद की बात है और बुनियाद बहुत आसान है। हम सारे हिन्दुस्तान के लिए शांति-सेना खड़ी करना चाहते हैं और शांति की सम्मति के तौर पर सर्वोदय-पात्र रखना है।

हमारा विचार जीये

अब हम कल पंजाब में जा रहे हैं। "उत्तरेण पथा गन्तव्यम्।" वह ऐसा मार्ग है कि शायद वापस लौट नहीं सकेंगे। शास्त्र ने ऐसी आज्ञा दी है कि मनुष्य को अन्तिम काल में उत्तर दिशा में जाना चाहिए। हम चाहते हैं कि वहाँ हम जायँ तो जितना प्रेम फैला सकते हैं, उतना फैलायें। फिर से यहाँ अगर आना हुआ तो अच्छा ही है। हमारी भी ऐसी ही इच्छा रहेगी। हम सब का आशीर्वाद चाहते हैं, हम शरीर से जीयें—ऐसा जो चाहते हैं, वे गलत हैं। हमें यह सोचना चाहिए कि हम जीयें, याने हमारा विचार जीये।

हम कहना चाहते हैं कि इस वक्त कुल दुनिया एक मार्ग की तलाश में है। यह अहिंसा का मार्ग उसे मिल जाय तो वह स्वीकार करेगी। यह रास्ता बताने की हिम्मत और हिकमत आप को करनी चाहिए। इसी आशा की निगाह से भारत की ओर दुनिया देख रही है। यह काम करने की बुद्धि और शक्ति ईश्वर आपको दें, यही प्रार्थना है।

◆◆◆

प्रार्थना-प्रवचन

झुंझनू (राज०) २७-३-'५९

क्या हम सत्ता के पीछे दौड़ कर आजादी की तपस्या का फल भोगना चाहते हैं ?

यह एक बहुत बड़ा स्थान है। सामने कितने बड़े-बड़े मकान खड़े हैं। मानो कोई इन्द्रनगरी है। यहाँ एक बड़ा कालेज भी है। उसमें लड़के भी बहुत तादाद में हैं। लड़कों के चेहरे मैं फौरन पहचानता हूँ। जैसे गाय को, घोड़ों को फौरन पहचानता हूँ, वैसे ही विद्यार्थियों को पहचानता हूँ। विद्यार्थी मेरी जात-वाले हैं। मैं विद्यार्थी हूँ। मेरा विद्याध्ययन रोज चलता रहता है। इसलिए मैं जहाँ भी विद्यार्थियों को देखता हूँ, वहाँ मेरा दिल खुल जाता है। आज आपकी हालत क्या है ? आपकी कौन सी हैसियत है ? इस पर विद्यार्थियों को सोचना चाहिए।

गुलामी का दर्द

हम पैंतालिस-पचास साल पहले स्कूल में पढ़ते थे तो हमारे मन में ऐसा विचार उठता था कि हम ऐसे देश के नागरिक हैं, जो गुलाम है। दुनिया के नकशे में इंग्लैंड के साम्राज्य को लाल रंग में दिखलाया गया था। तब दक्षिण अफ्रिका का लाल रंग, कैनड़ा का लाल रंग और हिंदुस्तान का भी लाल रंग—यानी एक लाल रंग में ही सब आते थे। हिंदुस्तान का नकशा जिस पन्ने पर रहता था, उस पन्ने पर इंग्लैंड का नकशा भी एक कोने में रहता ही था। वह यह दिखाने के लिए कि इंग्लैंड इतना छोटा सा देश है तो भी इतने बड़े हिंदुस्तान को अपने हाथों में रखता है। उस नकशे को देखकर हमें इतना तीव्र दुःख होता था कि हम उसका वर्णन नहीं कर सकते। इधर तो हम इतिहास पढ़ते थे कि हमारा देश बहुत प्राचीन है, अनुभवसम्पन्न है, यहाँ दस हजार साल से सभ्यता और संस्कृति चली आयी है और इधर यह भी पढ़ाया जाता था कि डेढ़ सौ साल से हमारे देश का कहीं कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है। हम अंग्रेजों के अधीन हैं। अंग्रेजों के राज्य में सूर्य अस्त नहीं होता। सारी पृथ्वी पर जहाँ-जहाँ सूर्य पहुँचता है, वहाँ-वहाँ इंग्लैंड का साम्राज्य है। योरप, एशिया, आस्ट्रेलिया, अमेरिका, अफ्रिका आदि अंग्रेजों के अधीन हैं। "Britain shall rule the waves" समुद्र पर ब्रिटेन की सत्ता रहेगी। चारों ओर दुनिया है और मध्यबिंदु में इंग्लैंड। नकशे में ऐसा देखकर तथा किताबों में पढ़ कर हमें बहुत वेदना होती थी कि हम गुलाम देश के विद्यार्थी हैं।

आजादी का आनंद

१९०७ की बात है। बड़ौदा में एक व्याख्याता आया। वह कहने लगा कि इस साल कुछ-न-कुछ होना चाहिए। हर पचास साल के बाद कुछ-न-कुछ होता है। १७०७ में औरंगजेब मरा। १७५७ में पलासी की लड़ाई हुई। १८०७ में वेलूर की बगावत हुई। १८५७ में प्रसिद्ध गदर हुआ। इसलिए अब १९०७ में भी कुछ होना चाहिए। तब हम राह देखने लगे कि देखें कब क्या होता है। लेकिन १९०७ में कुछ नहीं हुआ १९०८ में लोकमान्य तिलक गिरफ्तार हुए। हम छोटे बच्चे थे, उस अवसर पर हमने एक बहुत बड़ा जुलुस निकाला। हजारों लोग उसमें सम्मिलित हुए। तब हमें लगा कि इस साल जरूर कुछ हो जायगा। लेकिन हुआ कुछ नहीं। लोकमान्य तिलक को ६ साल की सजा दे दी गयी। वह सजा बहुत कड़ी थी। फिर आये गांधीजी।

१९१६ में हम कालेज में पढ़ते थे। आधा अभ्यास हुआ था। इन्टर की परीक्षा के लिए जा रहे थे। जाते-जाते बीच में ही उतर कर हम काशी चले गये और हमने तय कर लिया कि अब घर नहीं जाकर कहीं ब्रह्मविद्या का चिंतन करेंगे। २५ मार्च को हमने घर छोड़ा। ४२ साल हुए। तब से आज तक कभी हमारा चित्त घर की तरफ नहीं गया। उस समय हममें जो एक निष्ठा उत्पन्न हुई, वही आज हमें घुमा रही है।

१९०७ में कुछ नहीं हुआ तो १९५७ में कुछ होगा, यही हम सोचते थे। इतने ही में गांधीजी ने जाहिर कर दिया कि एक साल में स्वराज्य होगा। यह १९२१ की बात है। उस समय असहकार आन्दोलन चला। इस साल ('२१) के अन्त में हम स्वराज्य हासिल करेंगे, ऐसा सभी लोग बोलने लगे। आजादी की तमन्ना जनता में पैदा हुई। गांधीजी जेल में चले गये, लेकिन उनके कथन से हमें जो स्फूर्ति मिली तथा हमारे दिमाग में जो हिम्मत बढ़ी, उससे लगने लगा कि अब तो जरूर स्वराज्य हासिल होना चाहिए।

लोकमान्य को जब सजा हुई थी, तब आखिरी दिन उनको कोर्ट में कुछ बोलने के लिए कहा गया। उन्होंने वहाँ बताया कि "इस अदालत से ऊपर भी एक और अदालत है, परमेश्वर की

अदालत ! उस अदालत के सामने कहना चाहता हूँ कि मैं बेगुनाह हूँ। मैंने जो चीज की है, वह ठीक है। मैं बाहर रहकर जितना काम करता, उससे बहुत ज्यादा काम मेरी इस जेल की सजा से होनेवाला है।" लोकमान्य के बयान से देश में एक तूफान सा हुआ। उन्होंने कहा कि 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध हक है और वह हम लेकर रहेंगे।'...आखिर १९४७ में याने ३६ साल के बाद स्वराज्य आया। हम तो १९५७ में कुछ होगा, ऐसा मानते थे। लेकिन दस साल पहले ही स्वराज्य प्राप्त हो गया। खैर, उस जमाने में हम बच्चों का चिन्तन किस दिशा में चलता था, यह मैंने आपको बताया।

आजादी के बाद की प्रेरणा

आप आजाद देश के नागरिक हैं। आज आपके सामने देश को बनाने का काम है। हम लोगों ने देश को आजाद करने के लिए कोशिश की थी। अनेकों लोगों ने जान की बाजी लगा दी। उस जमाने में जो प्रेरणा थी, वैसी ही कोई प्रेरणा इस जमाने में भी होनी चाहिए। स्वराज्य-प्राप्ति का काम बहुत जल्दी हुआ। लेकिन अब भोगने के दिन हैं, यह समझोगे तो क्षय का आरम्भ होगा। पहले बहुत त्याग किया, उसकी जरूरत भी थी, लेकिन आज पहले से भी ज्यादा त्याग करने की जरूरत है। स्वराज्य हमारे हाथों में आया है, याने हमारा खेत हमारे हाथ में आया है। अब इस खेत में हमें मेहनत-मशक्कत करनी होगी। मिलजुल कर काम करना होगा। पहले से भी ज्यादा त्याग करना होगा। इसलिए हम सब को हाथ में हाथ लेकर खेत में जुटना होगा। फसल पैदा करना, उसकी हिफाजत रखना और जो पैदा हो, उसकी कटनी करना, यह सारा काम करने का है। अमावस्या टल गयी। कृष्णपक्ष समाप्त हो गया। शुक्लपक्ष शुरू हुआ है। अब दिन-ब-दिन चन्द्र बढ़ेगा। इसलिए मैंने कहा कि देश को आकार देना और मेहनत करना अभी बाकी है।

आजादी का आलोक घर-घर फैले

उन दिनों हमारे यहाँ के झगड़े, शंकराचार्य के गद्दी के झगड़े, जैनों के झगड़े लंदन प्रीवि कौंसिल में जाते थे। कैसी शरम की बात थी ? अब आजादी मिल गयी तो हमें जरा सोचना होगा कि आजादी का पार्सल कहाँ है ? लंदन से दिल्ली आया है और शायद थोड़ा सा हिस्सा जयपुर आया है। लेकिन वह पार्सल गाँव-गाँव तक नहीं पहुँचा है। कहीं बीच में ही स्टेशन मास्टर ने उडा लिया है। स्वराज्य आया, लेकिन गाँव-गाँव में उसका उदय नहीं हुआ है। जब तक गाँव का किसान, गाँव का मजदूर, गाँव का कारीगर यह नहीं समझता है कि हमारे लिए कुछ हो रहा है, तब तक हम कैसे कह सकते हैं कि हमारा राज्य आया है। जब तक बच्चे-बच्चे को स्वराज्य का अनुभव नहीं होता, तब तक हमारी आज़ादी का कोई अर्थ नहीं है। बहनों को स्वतन्त्रता का अनुभव आता है क्या ? क्या गरीबों को यह महसूस होता है कि हमारा राज्य आया है और हमें उसमें कुछ काम करना है, इस तरह की भावना नीचे के लोगों में उद्भूत हुई है ? आजादी मिली है तो क्या उसको बिगाड़ना है ? आजादी का एहसास इन सब लोगों को नहीं होता है, तब तक स्वराज्य गाँवों में नहीं, दिल्ली में ही है, ऐसा मानना चाहिए। सर्वोदय दिल्ली में हुआ, लेकिन झुंझनू में तो अन्धेरा है। गाँव-गाँव में अंधेरा है। गाँव में कुछ झगड़ा हुआ तो आज भी गाँव के लोग शहर के कोर्ट में जाते हैं। सारे लोग बेचारे डरे हुए हैं। गाँव-गाँव में दारिद्र्य है, बीमारी है, अज्ञान है। बाहर शहरों में तथा देश में कहाँ क्या चल रहा है, कोई जानता ही नहीं !

कहाँ शहर, कहाँ गाँव !

आज इस शहर में हम आलीशान मकान में हैं, लेकिन कल ही एक छोटे से गाँव में थे। वहाँ एक बिलकुल छोटी सी झोपड़ी में रहे। जानकी देवी को तो ऐसी झोपड़ी मिली कि उसमें एक छोटा सा छिद्रभर था, दरवाजा था ही नहीं। ऊपर सारा घास से ढ़का था, लेकिन नीचे था एक ही छिद्र ! वहाँ से ६ मील पर ही यह शहर है। यहाँ की हालत देखिये ! कितने बड़े-बड़े मकान हैं। यह सारा भयानक दृश्य है। आपको भी यह सारा भयानक मालूम होना चाहिए। इसकी तुलना जरा नजदीक के झोपड़े से तो कीजिये। गाँवों की बहुत ही दयनीय अवस्था है। गाँव के मुकाबले में आज का मकान देखकर लगता है कि कहीं हम एकदम स्वर्ग में तो नहीं पहुँच गये ?

यही हालत सुदामा की हुई। वह मुट्ठीभर तन्दुल लेकर भगवान से मिलने के लिए गया था। पहरेदार ने महल के दरवाजे पर उसे रोका और कहा कि तुम कौन हो ? उसने कहा कि मैं कृष्ण का बचपन का दोस्त हूँ। उसके कपड़े फटे हुए थे, चेहरे पर कोई कान्ति नहीं थी। उस गरीब ब्राह्मण को देखकर पहरेदार को लगा कि क्या यह नारायण का दोस्त हो सकता है ? इतने में भगवान कृष्ण को पता चला कि उसके दोस्त को दरवाजे पर रोका गया है। वे सब काम छोड़कर दौड़े-दौड़े आये और उसे अन्दर ले गये। सारे लोग देखते ही रह गये। कृष्ण ने सुदामा को सिंहासन पर बिठाया और उसका बहुत कौतुक किया। वे उसके पाँव दबाने लगे। लक्ष्मी माता भी सेवा में लग गयीं। कितना प्रेम प्रकट किया ! वह प्रेम कहाँ और आज अपने देश की यह निष्ठुरता कहाँ ? (यह कहते-कहते विनोबाजी रुक गये और उनकी आँखों से आँसू बहने लगे) भगवान ने पूछा, मेरे लिए कुछ लाये हो ? सुदामा एक पोटली लाया था, वह छुपाने लगा। परन्तु भगवान उसके पास से छीनकर वह चीज खाने लगे। लक्ष्मी माता बीच में आयीं और कहने लगीं, मुझे भी दो। दोनों उसके तंडुल खाने लगे। सुदामा को उसकी पत्नी ने कृष्ण से कुछ माँगने के लिए भेजा था, लेकिन सुदामा ने कुछ माँगा नहीं। वह वैसा ही लौट आया। भक्तिपूर्ण हृदय से वह सोचने लगा कि माधव कितना दयालु है, कितना कृपालु है, उसने मुझे कुछ नहीं दिया। मेरा वैराग्य उसने कायम रखा। धन्य है भगवान ! इस तरह वैराग्यशील भक्तिवान महापुरुष भगवान का चिंतन करते हुए वापस लौटा तो उसने देखा कि उसका गाँव सुवर्णनगरी में परिवर्तित हो गया है। उसे लगा कि क्या मैं वापस द्वारिका तो नहीं पहुँच गया हूँ ? इतने में उसकी पत्नी सामने आयी। उसके गले में बड़े-बड़े अलंकार थे। चेहरा वही था, परन्तु वह उसे पहचान नहीं सका। आखिर उसने कहा कि मैं यहाँ नहीं रहूंगा। उसने सारा दान दे दिया और गाँव से दूर जाकर एक झोपड़ी में रहने लगा। उसने अपना दारिद्र्य कायम रखा, अपना झोपड़ा कायम रखा। इस तरह सुदामा को लगा कि मुझ पर भगवान ने बहुत कृपा की।

आज मलाया के हेल्थ-मिनिस्टर आये थे। हमने पूछा कि दिल्ली में आपने क्या देखा ? उन्होंने कहा कि दिल्ली एक बहुत बड़ा शहर है। मैंने विनोद में कहा कि दिल्ली में गुण हों या अवगुण, लेकिन महात्मा गांधी ने मरने के लिए वही जगह पसन्द की, इसलिए अब वह तीर्थक्षेत्र बन गया है। खैर, बाहर के लोग क्या देखते हैं ? दिल्ली देखकर उनको लगता है कि हिन्दुस्तान की तरक्की हो रही है और छलांग मार कर हिन्दुस्तान आगे जा रहा है। वहाँ एयर-कंडीशन्ड मकान बनाते हैं। बाहर मई और जून की गरमी हो तो उन मकानों के अन्दर

सितम्बर की हवा रहती है। ऐसे मकान परदेश के लोग देखते हैं और खूब प्रशंसा करते हैं। कभी तो शायद उन्हें भी शंका होती होगी कि हम निकले तो भारत के लिए थे लेकिन कहाँ पहुँच गये ? यह लंदन है, पेरिस है या दिल्ली है ?

स्वराज्य के बाद सर्वोदय ही

स्वराज्य का मंत्र हमारे सामने था। उसके लिए हमने त्याग किया। जब नया मंत्र मिले, तभी त्याग के लिए मौका मिलता है। कालिदास ने कहा है कि तपस्वी पुरुषों को मेहनत और तपस्या करने से फल प्राप्त होता है तो वे नयी तपस्या आरम्भ करते हैं। नहीं तो पुण्य का लाभ लेते-लेते पुण्य क्षय हो जाता है। तपस्वी के जीवन की यह खूबी है कि वह नित्य नया त्याग करता ही रहता है। जब पतझड़ में वृक्ष के पत्ते हट जाते हैं, तब वसंत ऋतु शुरू होती है। नये पल्लव आते हैं। उसी तरह से तपस्वी की तपस्या भी क्षीण नहीं होती। उसमें हमेशा ताजगी रहती है। नयी तपस्या से नयी उमंग, नया उत्साह, नया आवेश एवं नया जोश आता है।

स्वराज्य के बाद हमारा मंत्र है—सर्वोदय। नया उत्साह देने के लिए गांधीजी ने यह मन्त्र दिया। उन्होंने कहा कि स्वराज्य हाथ में आते ही सर्वोदय होना चाहिए। यह नया मंत्र नया शब्द मिल गया। शब्द ही होता है, जो उत्साह देता है। शब्द से बढ़कर चैतन्य की शक्ति नहीं होती। स्वराज्य के बाद कुछ भयानक घटनाएँ हुईं। पचास लाख लोगों को इधर से उधर और उधर से इधर आना-जाना पड़ा। उसके परिणामस्वरूप लोगों का उत्साह थोड़ा कम हुआ। प्रारम्भ में राज्य चलाने का हमको अनुभव भी न था। परन्तु राज्य चलाना ही ध्येय मान लेने से जो उठा, वही राज्य में जाने लगा। अब यह बात ठीक है कि राज्य चलाने के लिए अच्छे-अच्छे लोग चाहिए। लेकिन उनके सामने भी उदात्त आदर्श होना जरूरी है।

भरत के हाथ में राज आया तो लक्ष्मण रामजी के साथ निकल गये। पीछे से भरत कहने लगे कि 'संपत्ति सब रघुपति के आही।' इसे ठीक ढंग से रखना चाहिए। रामजी ने उसको कहा कि तुम मेरे नाम से राज्य चलाओ। मेरी तरफ से राज्य चलाओ। भरत ने अद्‌भुत राज्य चलाया। यही समझकर कि यह सारा प्रभु का है, उसने राज्य सम्हाला। इसीलिए उसके नाम से इस देश को 'भरत-खंड' कहा जाने लगा। रामजी जंगल में चले गये। जंगल में उन्होंने जितनी तपस्या की, उससे ज्यादा तपस्या भरत ने नंदीग्राम में की। वह राज्य से ६ मील दूर एक छोटे से गाँव में रहता था, जब भरत-राम की भेंट हुई, तब कविने वर्णन किया है कि दोनों मूर्तियाँ एक-दूसरे के सामने खड़ी हुईं। एक बड़ी थी दूसरी छोटी। लेकिन दोनों का चेहरा देखने से यह पहचान नहीं होती थी कि जंगल में तपस्या किसने की है ? रामजी के नाम से राज्य चलानेवाला भरत के समान होना चाहिए।

सेवा का फल सत्ता से न माँगिये

भरत राज्य चलाये, लेकिन क्या लक्ष्मणजी भी अयोध्या में रहेंगे ? अब यह बात ठीक है कि कुछ लोग लायक हैं, परन्तु सभी का मुख सत्ता की ओर होने से सारी जनता पश्तहिम्मत हो जाती है। इन दिनों हम बराबर देख रहे हैं कि लोग पश्त-हिम्मत और मायूस हो गये हैं। राज्य में जाने की दौड़ लगी है। कुछ लोग कहते हैं कि मैं आठ साल जेल में था, लेकिन मुझे कुछ भी नहीं मिला ! मैंने इतना त्याग किया है, लेकिन मुझे कुछ भी नहीं मिला ! जिन्हें कुछ मिल गया, उनके साथ मत्सर शुरू हो गया। ऐसी हालत में क्या खादी चलेगी ? ग्रामोद्योग खड़े होंगे ? जमीन का सवाल हल होगा ? हरिजनों को राहत मिलेगी ? जो काम मुख्य रूप से होना चाहिए था, उस तरफ किसी का ध्यान ही नहीं है। जो उठा, वही दिल्ली पहुँचता है। दिल्ली गया हुआ वापस कैसे लौटेगा ? महाराष्ट्र के भक्त-शिरोमणि तुकाराम महाराज हैं। पंढरपुर में, जो महाराष्ट्र का बहुत बड़ा तीर्थस्थान है, विठ्ठल की एक सुंदर मूर्ति है। उस विठ्ठल-मूर्ति की महिमा तुकाराम महाराज गाते हैं। "तेथे जाउ नका कोणी, जे-जे गेले ते नाहीं आले परतोनी।" तुम वहाँ मत जाओ। वह परमधाम है। जो वहाँ जाता है, वह वापस नहीं लौटता ! तो जिनका अपना संसार है, बाल-बच्चे हैं, उनका मोह भी है, उनको वहाँ नहीं जाना चाहिए। ऐसा वर्णन तुकाराम महाराज ने किया है। ठीक वही वर्णन दिल्लीवालों पर लागू होता है। हम विनोद में कहते हैं कि दिल्ली मत जाओ, जो वहाँ जायगा, वह वापस नहीं आयेगा।

राज्य चलाना भी कर्तव्य है

दिल्ली का राज्य चलाना भी हमारा धर्म है, कर्तव्य भी है, लेकिन इस राज्य में भरत और उसके समान लक्ष्मण भी होना चाहिए। लक्ष्मण बाहर है तो भरत राज्य सम्हाल रहा है, ऐसा होना चाहिए। दोनों महान विरक्त,दोनों महान भक्त। एक जंगल में मंगल कर रहा है और दूसरा मंगल को जंगल कर रहा है। सुमित्रा के पास जाकर जब लक्ष्मण ने कहा कि मुझे जंगल में जाने की इजाजत दो, तब वह क्या भावना लेकर गया था ? यही कि मैं राम का भाई हूँ, दशरथ का पुत्र हूँ, ऐसा कोई नाता उसने ध्यान में नहीं रखा। एक ही चीज ध्यान में रखी कि मैं राम का भाई हूँ। राम को ही पिता समझकर वह उसके साथ गया। लक्ष्मण अयोध्या छोड़कर राम के साथ गया और भरत ने अयोध्या को ही जंगल समझा। दिल्ली में जो रहेगा, वह दिल्ली को जंगल समझेगा और बाहर मेरे जैसा जो फकीर रहे, वह जंगल को दिल्ली समझे।

मुझे अब पूछा जाता है कि जो लोग चुनकर आयेंगे, उनकी हैसियत क्या होगी ? मैं कहता हूँ कि सत्ता के जरिये सेवा करना जैसा एक काम होता है, वैसा ही जो उसमें नहीं जाते हैं, उनको सेवा के जरिये ही सेवा करनी है। मैंने मिसाल दी कि दिल्ली में जो हों, वे विष्णु-भगवान और बाहर जो हों, वे शंकर-भगवान होने चाहिए। विष्णु की हालत क्या होगी ? लक्ष्मी माता का जब स्वयंवर हुआ था, तब बहुत सारे बादशाह 'लक्ष्मी मुझे वरेगी और मेरे ही गले में माला डालेगी' इस भावना और आशा से आये। लक्ष्मी ने अपना प्रण जाहिर किया कि जिस शख्स को मेरे प्राप्ति की इच्छा नहीं होगी, उसे मैं माला डालूंगी। जितने आये थे, वे सब बेवकूफ साबित हुए और भागने लगे। आखिर वहाँ कोई नहीं रहा। फिर लक्ष्मी ढूँढती चली गयी। झुंझनू में भी आयी थी, सीकर में भी गयी, जयपुर, दिल्ली में भी गयी—वहां के बड़े-बड़े मकानों में गयी। आखिर क्षीरसागर में गयी। वहां शेषशायी भगवान अत्यन्त शान्त होकर लेटे हुए थे। उन्होंने लक्ष्मी को देखा भी नहीं। याने ऐसा शख्स जिसे उसकी परवाह भी नहीं थी। उनके चरण में लक्ष्मी बैठ गयी और आज भी वहीं है, वह उन्हें छोड़ती नहीं है। विष्णु की भाँति अत्यन्त अनासक्त होकर लोगों के नाम से लोगों के लिए ही राज्य चलाना चाहिए। भगवान शंकर का वर्णन है कि उनके हाथ में कपाल है, टूटी-फूटी खटिया है, भस्म लगाया है—याने सारा दरिद्र-नारायण का ठाट ! वह वैराग्य में मस्त है और विष्णु अनासक्ति में। इस तरह दोनों चाहिए। मेरे प्यारे भाइयो, राज्य

चलाना कर्तव्य है। वह रामजी का कार्य समझकर अत्यन्त अनासक्ति से वैराग्यपूर्ण होकर चलाना चाहिए। लेकिन दूसरी एक ऐसी जमात होनी चाहिए, जो गाँव-गाँव में जाकर लोगों में स्वराज्य की भावना निर्माण करे। स्वराज्य याने ग्राम-स्वराज्य! लोगों को जगाये और कहे कि 'जागिये रघुनाथ कुँवर पंछी बन बोलन लागे"। उधर अयूबखान एक पंछी बोल रहा है। उधर ईजिप्त में दूसरा पंछी नासिर बोल रहा है। तीसरा पंछी तिब्बत में भी बोल रहा है। ईजिप्त, इराक, पाकिस्तान में क्या चल रहा है, यह देहात के लोगों को मालूम नहीं है। उनके पास कौन जायगा, कौन समझायगा? दुनिया में क्या हो रहा है, यह ज्ञान लोगों के पास कौन पहुँचायेगा?

लक्ष्मण जैसे शान्ति-सैनिक चाहिए

उदयपुर के नजदीक मोटर के रास्ते पर एक छोटे से गाँव में हम ठहरे। उस दिन गाँधीजी का मृत्यु-दिवस था। हमने सभा में एक बहन को पूछा कि क्या तुम महात्मा गांधी का नाम जानती हो? उसने कहा कि हाँ जानती हूँ। हमने पूछा वे कहाँ हैं? कहने लगी, कहीं शहर में हैं। जयपुर या उदयपुर? तो कहने लगी, उदयपुर के नजदीक कहीं हैं। याने महात्मा गांधी चले गये, इसकी खबर भी उसे नहीं थी—यह बहन की बात हुई। एक बीस-पचीस साल के भाई से पूछा तो उसने कहा कि मैंने उनका नाम भी नहीं सुना है। जहाँ हमारे ज्ञान की यह हालत है, वहाँ पंजाब में क्या हो रहा है, पाकिस्तान में क्या हो रहा है? यह कौन जानेगा? इसलिए लक्ष्मण जैसे शांति-सैनिक और अनेक भरत चाहिए। वैसे जनता में भी काम करने के लिए बहुत लक्ष्मणों की जरूरत है। रामजी के साथ लक्ष्मण घूमते थे, जंगल-जंगल जाते थे, आखिर सुग्रीव की नगरी में पहुँचे। सुग्रीव को राम ने संकट-मुक्त किया और उसने वादा किया कि हम सीता की खोज में जायेंगे। फिर दूसरे दिन रामजी चातुर्मास बिताने के लिए जंगल में पहुँच गये। उसके बाद सुग्रीव से कोई खबर नहीं मिली। तब एक दिन उन्होंने लक्ष्मण को कहा—अरे, जरा जा, देख सुग्रीव ने वादा तो किया था, लेकिन अभी तक सीता की खोज में अपनी सेना भेजी नहीं है। राज्य की मस्ती में उन्मत्त हो गया दीखता है। लक्ष्मणजी उठे। हाथ में धनुष लिया और चल पड़े सुग्रीव की ओर। तब रामजी बोले कि कड़ा रूप मत दिखाना। सीता की खोज हो रही है कि नहीं इतना भर देख लेना। हनुमान को पता चला कि लक्ष्मणजी गुस्सा होकर आ रहे हैं। वे एकदम सुग्रीव के पास दौड़े गये और कहने लगे कि अरे तू कैसा गाफिल हो रहा है? लक्ष्मणजी आने से पहले ही सेना तैयार रख। सुग्रीव ने लक्ष्मण से माफी माँगी और कहा कि हम तो हरि के दास हैं। लेकिन भोगासक्त होने के कारण अपना कर्तव्य भूल गये थे।

आज कल जहाँ-जहाँ हम जाते हैं, वहाँ-वहाँ अपनी-अपनी कान्स्टीट्युएन्सी में नेता लोग आते हैं। क्योंकि वे अगर गैर-हाजिर रहेंगे तो इलेक्शन के समय जनता पूछेगी कि जब बाबा आया था, तब तुम कहाँ थे? हम उनको पूछते हैं कि क्यों भाई! काम होगा? तो कहते हैं, जी हाँ, बहुत होगा। हम चले जाते हैं और जब पीछे देखते हैं तो सुग्रीव का नमूना दीखता है। जहाँ रामजी का वादा भूल गये, वहाँ विनोबा की क्या हस्ती है? इसलिए तगादा लगानेवाला लक्ष्मण चाहिए। आज सुग्रीवों की सभा हुई थी। उन्होंने वादा किया था कि हम काम करेंगे। इसलिए हम चाहते हैं कि लक्ष्मणों की सेना होनी चाहिए, जो इन लोगों के पीछे तगादा लगाये।

आपका कर्तव्य

हिन्दुस्तान को जगाना है। गाँव-गाँव को जगाना है। दुनिया को अपना रूप देना है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि हिन्दुस्तान में शांतिमय क्रान्ति हो। झुंझनू के लोग व्यापार के लिए इधर-उधर जाते हैं। वे ग्राम-दान, भू-दान और शान्ति-सेना के काम में ध्यान दें तो यहाँ का काम हो सकता है। विद्यार्थी भी यह महसूस करें कि हम जिनका अन्न खाते हैं, वे आज झोपड़े में रहते हैं, इसलिए विद्या प्राप्त करने के बाद हम उनकी सेवा करेंगे। अगर विद्यार्थी ऐसा संकल्प कर लें तथा दूसरे लोग अपने-अपने कर्तव्य को पूरा करने के लिए जागरूक हो जायँ तो हम निश्चय ही राष्ट्र में निर्माण का महान काम कर सकेंगे और आजादी का आनन्द पा सकेंगे।

◆◆◆

"गांधीजी के जमाने में हमने जिस तरह का 'सत्याग्रह' चलाया, वह निषेधात्मक किस्म का था। उन्होंने ब्रिटिश शासकों को भारत छोड़ने के लिए कहा। उन परिस्थितियों में वह स्वाभाविक था। लेकिन जब हम खुद शासक हैं तो हमारा 'सत्याग्रह' ठोस और रचनात्मक होना चाहिए। मुझे उम्मीद है कि ग्रामदान-आन्दोलन एक अच्छे किस्म के सत्याग्रह का रास्ता दिखायेगा। अब धीरे-धीरे लोग समझेंगे कि स्वैच्छिक परिवर्तन क्या है तथा जबरदस्ती क्या है और वे जल्दी ही यह भी महसूस करेंगे कि किसी भी काम में बल-प्रयोग की कोई जरूरत नहीं है।

"एक लोकतन्त्रीय देश में सत्याग्रह को एक ठोस तथा ऊँचा उठानेवाली शक्ति होनी चाहिए। हम 'बदलो' या 'खत्म करो' नहीं कह सकते। हमें अपने को निरन्तर सुधारना पड़ेगा। हमारे पास पुराने अनुभव हैं। निषेधात्मक सत्याग्रह ने हमें स्वतंत्रता दिलाई, लेकिन वह ठोस और प्रभावशाली शक्ति पैदा करने में समर्थ नहीं रहा। आज भी लोग यह महसूस नहीं करते हैं कि प्रेम की ठोस शक्ति भी कोई एक चीज है। ग्रामदान-आन्दोलन के जरिये हमें वह विश्वास और धारणा पैदा करनी है।"

◆◆◆

अनुक्रम

१. नये नगरों के निर्माण में जीवन-शक्ति का...
चंडीगढ़ १ मई '५९ पृष्ठ ३९७

२. रक्षण-शक्ति के बिना सर्वोदय-विचार कामयाब....
सूरजगढ़ ३१ मार्च '५९ ,, ४००

३. क्या हम सत्ता के पीछे दौड़कर आजादी की तपस्या...
झुंझनू २७ मार्च '५९ ,, ४०१

◆◆◆

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।
पता : गोलघर, वाराणसी (उ० प्र०) फोन : १३९१ तार : 'सर्व-सेवा' वाराणसी।